© 2018 IJSRSET | Volume 4 | Issue 6 | Print ISSN: 2395-1990 | Online ISSN : 2394-4099

# पूर्व मध्यकालीन भारतीय राजनीतिक व्यवस्था में दिद्दा

**Dr. Sandeep Kumar Yadav**
**Village/Post- Malipur,**
**DIST- AMBEDKAR NAGAR, (U.P) 224159**

पूर्व मध्यकालीन राजनीतिक संरचना राजतंत्रीय प्रणाली पर आधारित थी। इस काल का भारतीय इतिहास सामंतवाद से प्रभावित था। सामंती संस्थाएँ उस राज्य में उपयुक्त होती हैं जिसमें केन्द्रीय शक्ति का अभाव होता है। इस काल के राजाओं के लिए युद्ध जो कि एक शौक थी व सामंती थी, स्वतः शक्तिशाली होते गये। किसी भी कमजोर राजा के उत्तराधिकार ने उन्हें यह अवसर प्रदान किया कि वे अपनी शक्ति को और आगे ले जायें। पदों में निरंतर बदलाव इस युग की महत्त्वपूर्ण विशेषता है। भारतीय इतिहास के किसी और काल में देश के बड़े क्षेत्र में एक वंश से दूसरे वंश में इतनी तेजी से अधीन नहीं हुए।

उत्तर भारत में एक मजबूत केन्द्रीय सत्ता के अभाव में 712 ई0 में अरबों ने सिंध पर आक्रमण किया तथा विजय प्राप्त की। इस काल की सबसे महत्त्वपूर्ण घटना तीन शक्तियों का उदय होना था– गुर्जर–प्रतीहार, पाल और राष्ट्रकूट। इन तीनों शक्तियों की बीच अपनी श्रेष्ठता स्थापित करने के लिए लगभग दो सौ वर्षों तक संघर्ष चलता रहा जिसे 'त्रिपक्षीय संघर्ष' कहा जाता है। इस त्रिपक्षीय संघर्ष ने भारत को आंतरिक रूप बहुत क्षति पहुँचायी क्योंकि इन शक्तियों के पतन के साथ ही भारत में राजनीतिक विकेन्द्रीकरण की प्रक्रिया और तीव्र हो गयी। इससे व्यापार वाणिज्य की अवनति हुई है साथ ही इन परिस्थितियों ने महिलाओं की स्थिति को भी बहुत कमजोर किया। क्योंकि तत्कालीन परिस्थितियों ने महिलाओं को सार्वजनिक जीवन के बजाय घर की चहारदिवारों के बीच पहुँचाया।

ऊपर वर्णित राजनीतिक परिस्थितियों में महिलाओं ने भी कुछ महत्त्वपूर्ण स्थान पाये। पुरालेख और समकालीन साहित्यों के माध्यम से यह पता चलता है कि कुछ रानियों की उनके पतियों के जीवनकाल के दौरान भी उनकी अपनी स्वतंत्र संपदा थी। कश्मीर, सिंध, गुजरात और उत्तर भारत के अन्य क्षेत्रों के साथ–साथ दक्षिण भारत में भी महिलाओं के विशाल राजनीतिक प्रभाव के उदाहरण मिलते हैं। इसके अंतर्गत सुगंधा, दिद्दा, श्रीलेखा, सूर्यमती, अंगलेखा, जयामती, कल्हणिका, सिल्ला, सुभान देवी, त्रिभुवन महादेवी, अक्का

देवी आदि का विशेष रूप से उल्लेख किया जा सकता है। राजनीति, प्रशासन, सैन्य अथवा किसी अन्य जोखिम भरे कार्य में महिलाओं के योगदान का उल्लेख करना महत्त्वपूर्ण है।

दिद्दा राजा सिंहराज की पुत्री थीं जो कि लोहर वंश के थे। वे उदयभांड के राजा भीमाशाही की पौत्री थीं। क्षेमगुप्त (950–58 ई) के साथ उनकी शादी ने कश्मीर के भविष्य को अत्यधिक प्रभावित किया। वह एक मनोरम व्यक्तित्व की महिला ही नहीं थीं, अपितु बुद्धिमत्ता में अपने पति से कोसों आगे थीं। प्राकृतिक रूप से उन्होंने अपने पति के मस्तिष्क पर पूरा नियंत्रण कर लिया था और यही वजह रही कि वे दिद्दा क्षेमा[1] के नाम से जाने जाते हैं।

हम यह जान पाते हैं कि जब राज्यों के स्थिर होने की बहुत कम संभावनाएँ थीं, 958 ई0 में क्षेमगुप्त की मृत्यु हो गयी। उस समय के रीति–रिवाजों के अनुसार दिद्दा जो कि उनकी प्रिय प्रमुख रानी थीं, वह स्वयं सती होना चाहती थीं किंतु नारवाहन जो कि राज्य का एक विवेकी मंत्री था उसने दिद्दा की लोगों के प्रति सेवाएँ और उनकी लोक हितकार्यों की क्षमताओं का आकलन करते हुए उनको मरने से रोक लिया।[2] दिद्दा इससे सहमत हुईं और अपना विचार बदल दिया। तत् पश्चात् अबोध राजकुमार अभिमन्यु सिंहासन पर आसीन हुआ और प्रभावशाली रानी दिद्दा ने प्रशासन की बागडोर अपने हाथों में ले लिया। वह अपने पुत्र की राज प्रतिनिधि थीं।[3]

अभिमन्यु के शासन कार्य के दौरान उन्होंने शक्तिशाली सर्वअधिकारा फागुन का अंत किया जिसने इन्हें अपनी पुत्री क्षेमगुप्त को देकर अप्रसन्न किया था। फागुन पर यह दबाव डाला गया कि वे पंच पद से हट (रिटायर) जायें किंतु राजप्रतिनिधि की असली समस्या अब आनी थी। महिमन और पटाला (949–50ई0) पर्वगुप्त की बेटियाँ थीं (जिनकी शादी दो मंत्रियों से की गयी थी) जैसा कि ये दोनों एक राजकुमारी की तरह राजभवन में पली बढ़ी थीं। ये स्वयं को राजगद्दी के लिए उपयुक्त समझने लगी थीं। उन्होंने कुछ प्रभावशाली व्यक्तियों के साथ मिलकर शक्तियों को नियंत्रित करने के लिए एक षड्यंत्र रचा किंतु षडयंत्रकारियों के खिलाफ कठोर कदम उठाने के स्थान पर दिद्दा ने पहले उन्हें राजमहल से बाहर किया फिर उन्हें देश निकाला दे दिया। महिमन अपने श्वसुर शक्तिसेना की शरण में चली गयीं और अन्य षडयंत्रकारियों ने उनसे मिलकर विद्रोह करके स्थिति को और भयानक बना दिया। जबकि राज प्रतिनिधि की ओर से नारवाहन और उनके रिश्तेदारों के अतिरिक्त लगभग सभी उनको छोड़ देना चाहते थे।[4]

जो सत्ता के विरूद्ध संर्घष कर रहे थे वे पाममुर के निकट पदम्स्वामी मंदिर के पास इकठ्ठा हुए। दिद्दा जो कि मुश्किल में फँस चुकी थीं अपने लंबे जीवन–काल में वे प्रथम बार सहनशीलता, धैर्य और राजनीति के एक कठिन परीक्षा से गुजर रहीं थीं, किंतु उन्होंने धैर्य कायम रखा और चालाक राजनीतिज्ञ की

तरह व्यवहार किया। उन्होंने यह महसूस किया कि ललितपुर (लीतापुर) के ब्राह्मण की मदद महिमन समर्थकों का मनोबल बढ़ाने का कार्य करता है किंतु वह यह भी जानती थीं कि ब्राह्मणों की एक बहुत बड़ी कमजोरी पैसा है। बहुत अधिक सोने के माध्यम से उन्होंने ब्राह्मणों को खरीद लिया और विद्रोह खत्म हो गया। बाद में यही ब्राह्मण उनके और महिमन के बीच सुलह कराने के लिए बुलाये गये–''उस पैसे के प्रति श्रद्धा जो इतनी अपार शक्ति रखता है।'' कल्हण कहते हैं कि–''बेचारी रानी, जिनके विषय में किसी ने यह तक नहीं सोचा था कि वे गाय के पद चिह्नों पर चलने में सक्षम होंगी वे समुद्र पर अपने पद चिह्न बना दिये, जैसे कि हनुमान जी ने समुद्र लाँघ गये थे।[5]

जब विद्रोह समाप्त हुआ बुद्धिमान राजप्रतिनिधि ने शक्तिशाली महिमन समर्थकों पर जीतने की आवश्यकता महसूस की और यहाँ पुनः उन्होंने मनुष्य व्यवहार के निर्णायक की भूमिका अदा की। यह जानते हुए भी कि वे अखण्डित होने वाले मनुष्य थे। ''समर्थन दिया गया जबकि रिश्वत् में सोना दिया गया था उन्होंने प्रमुख विभाग अपने पास रखे और यशोधर को सेना का प्रमुख बना दिया। कुछ समय पश्चात् जब महिमन बिना किसी समर्थक के निकले उन्हें (दिद्दा ने) जादू टोने से मरवा दिया। कल्हण के अनुसार–'' एक विधवा का शासन बिना किसी विरोध के स्थापित हो गया।[6]

किंतु, तुरंत ही एक अत्यंत गंभीर समस्या राजप्रतिनिधि के समक्ष आ गयी। जब यशोधर ने शाही राजा थक्कान को हराने में अपनी शक्ति का प्रदर्शन किया। दिद्दा को उसकी शक्तियों पर संदेह हुआ और उसे उन्होंने रिश्वत लेकर शाही को गद्दी पर बैठाने का दोषी पाया। जब यशोधर को देश निकाला का प्रयास किया गया तब उसके समर्थकों ने दिद्दा का विरोध किया और उन्हें राजमहल में घेर लिया।[7.] किन्तु दिद्दा ने अपने मंत्री नारवाहन की मदद से विद्रोह कुचल दिया। नारवाहन और उसकी सेनायें कश्मीर के इतिहास में एकंगाओं के नाम से जानी जाती हैं। कृतज्ञ रानी ने नारवाहन को राजांका की उपाधि देते हुए अपना प्रमुख सलाहकार नियुक्ति किया। षडयंत्रकारियों की शक्तिशाली सेना पर दिद्दा की विजय ने उनके मित्र एवं शत्रुओं दोनों को अचंभित किया।

थोड़े समय में ही कोषाधिकारी सिंधु ने उन्हें यह विश्वास दिला दिया कि नारवाहन शक्तियों को हड़पने का प्रयास कर रहा है वे दिद्दा की नजरों में गिर गये और उन्हें अपने को बचाने के लिए आत्महत्या का रास्ता चुनना पड़ा।[8] अब वास्तव में दिद्दा को डामरों (जमींदार) की बढ़ती हुई शक्तियों से चिंता होने लगी तो उन्होंने अपने वफादार मंत्री फागुन जो कि राजनीति से संन्यास ले लिया था, को बुलाया। फागुन ने डामरों के विद्रोह को दबा दिया और उसके कुछ समय बाद तक उनके विषय में कुछ सुनायी नहीं दिया। उस दौरान राजा अभिमन्यु समय अनरूप बड़े हो रहे थे किंतु दुर्भाग्यवश 972 ई0 में वे क्षय रोग के शिकार होकर मर

गये। अभिमन्यु की मृत्यु ने दिद्दा को झकझोर दिया और तत्कालिक रूप से जिंदगी को देखने का उनका नजरिया बदल गया, इस घटना ने उनके क्रूर व्यवहार को बदल दिया और वह धार्मिक एवं दान–पुण्य कार्यों की ओर आकर्षित हुईं।[9] अभिमन्यु का बड़ा बेटा नन्दिगुप्त को उसकी प्रभावशाली दादी ने राजगद्दी पर बैठाया और उन्होंने बच्चे के राज प्रतिनिधि की बागडोर अपने हाथों में रखी।[10] उस वक्त तक दिद्दा के चरित्र या व्यवहार में एक बहुत बड़ी कमजोरी आ गयी थी। कल्हण के अनुसार उन्हें अधिकारियों को अपने शयन कक्ष में बुलाने में हिचक नहीं होती थी। उनके चरित्र की यह कमजोरी सत्ता पाने की एक असमान्य इच्छा तुरंत ही एक उग्र विरोध के रूप में परिवर्तित हुई और उन्होंने अपने पोते नन्दिगुप्त को 973 ई0 में जादू–टोने से मरवा दिया।[11] त्रिभुवन (973–75 ई0) और भीम गुप्त (975–81 ई0) जो कि नन्दिगुप्त के छोटे भाई थे दिद्दा के द्वारा मरवा दिये गये और उन्होंने स्वयं 981 ई0 में कश्मीर के सिंहासन की बागडोर अपने हाथों में ले ली तथा सिंहासन पर आसीन हुईं। अब वह घाटी पर अपने सर्वशक्तिमान और निरंकुश शासन के संजोये हुए सपने को साकार करने में सफल हो गयीं जिनके लिए उन्हें बहुत लंबे समय तक इंतजार करना पड़ा।[12]

इस प्रसिद्ध महिला का कार्यकाल ईष्या, साजिश, व्यभिचार और अवसरवाद का एक विचित्र मिश्रण था। अब रानी का एक अति प्रिय जिसका नाम तुंगा था और वह परनोत्सा से था, कश्मीर का मुख्यमंत्री बना। अन्य मंत्रियों ने राजकुमार विग्रहराज, जो कि दिद्दा के भाई लोहर वंश के उदयराज का बेटा था उसके निर्देश में विद्रोह की आवाज उठाई। किंतु विग्रहराज, कश्मीरी सेनायें जो कि तुंगा द्वारा संचालित थीं, उससे पराजित हुआ। दिद्दा ने अपने अगले मातहत पृथ्वीपाल जो कि राजापुरी का विद्रोही जागीरदार था उसे नतमस्तक होने के लिए मजबूर कर दिया। तुंगा जो कि अब सेना प्रमुख बन गया था उसे दिद्दा के निकट क्षेत्रों में डामरों (क्ंउतें) की उभरती हुई शक्तियों को कुचलने का श्रेय दिया गया।

दिद्दा की 1003 ई0 में मृत्यु हो गयी किंतु उन्होंने अपनी मृत्यु के पूर्व अपने भाई के पुत्र लोहर वंश के संग्रामराज को कश्मीर का अगला उत्तराधिकारी बनाया। यह अविश्वसनीय रूप से एक बड़ा राजनीतिक कार्य था जो कि बिना किसी उथल–पुथल के सत्ता का एक वंश से दूसरे वंश में परिवर्तित हो गया।[13]

संदर्भ एवं टिप्पणियाँ


1. *राजतरंगिणी,* भाग–6, पृ0 172.
2. बजाज, पी0एन0, *डाटर्स आफ द वितास्ता,* पृ0 25.
3. *तत्रैव,* पृ0 30.
4. कपूर, एम0एल0, *द एमिनेंट रूलर्स आफ कश्मीर,* पृ0 72.

5. *राजतरंगिणी,* भाग–6, पृ0 211–17.

6. *तत्रैव,* भाग–6, पृ0 228–29.

7. सरकार, डी0सी0, *सोसायटी एण्ड एडमिनिस्ट्रेशन आफ इण्डिया,* पृ0 150.

8. सक्सेना, के0एस0, *पॉलिटिकल हिस्ट्री ऑफ कश्मीर,* पृ0 150.

9. *राजतरंगिणी,* भाग–6, पृ0 284–85.

10. *तत्रैव,* भाग–6, पृ0 295–307.

11. *तत्रैव,* भाग–6, पृ0 293.

12. *तत्रैव,* भाग–6, पृ0 289–92, सक्सेना, के0एस0, *पॉलिटिकल हिस्ट्री ऑफ कश्मीर,* पृ0 151.

13. *तत्रैव,* भाग–6, पृ0 330–32. सक्सेना, के0एस0, *पॉलिटिकल हिस्ट्री ऑफ कश्मीर,* पृ0 154.

*14.* सरकार, डी0सी0, *सोसाइटी एण्ड एडमिनिस्ट्रेशन ऑफ इण्डिया, पृ0 246.*